

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 10 अध्याय 54 — कृष्ण-रुक्मिणी विवाह

5 October 2026



बहन की प्रार्थना पर भाई के प्राण बचते हैं; फिर दीपों से जगमगाती द्वारका में कृष्ण उस रुक्मिणी का पाणिग्रहण करते हैं जो स्वयं लक्ष्मी हैं।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विङ्गडम् में पुनः स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पवित्र कथाओं और शिक्षाओं की हमारी भक्तिमयी यात्रा। दशम स्कन्ध के इस चौवनवें अध्याय में शुकदेवजी राजा परीक्षित को पीछा करती सेनाओं की धूल से निकालकर एक विवाह के उत्सव तक ले जाते हैं।

अध्याय-परिचय

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 10 (दशम स्कन्ध, उत्तरार्ध)
- अध्याय: 54 (चतुःपञ्चाशत्तम अध्याय)
- अध्याय शीर्षक: श्रीकृष्ण और रुक्मिणी का विवाह
- मुख्य वक्ता: श्री शुकदेव गोस्वामी (राजा परीक्षित को सुनाते हुए)

- मुख्य श्रोता: राजा परीक्षित
- मुख्य स्थल: विदर्भ की राजधानी कुण्डिनपुर से लौटता मार्ग, और फिर द्वारका नगरी
- केंद्रीय विषय: पीछा करते राजाओं की पराजय; रुक्मी की चुनौती और उसका अपमान; रुक्मिणी की प्रार्थना और बलराम का उपदेश; द्वारका में विवाह
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 10, अध्याय 54, श्लोक 1-60
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, दशम स्कन्ध)

पूर्व अध्याय का संदर्भ

अध्याय 53 में श्रीकृष्ण शिशुपाल के साथ रुक्मिणी के बलात् विवाह की पूर्वसंध्या पर कुण्डिनपुर पहुँचे। जब राजकुमारी देवी अम्बिका की पूजा करके लौट रही थीं, तब प्रभु ने समस्त उपस्थित राजाओं के सामने उन्हें अपने रथ पर बिठाया और चल पड़े; राजा चिल्ला उठे कि सामान्य ग्वालों ने उनका मान छीन लिया है।

राजाओं का पीछा

क्रोध से जलते वे सब राजा अपनी-अपनी सेनाओं सहित घोड़ों, हाथियों और रथों पर सवार होकर कवच पहने, धनुष उठाए श्रीकृष्ण के पीछे दौड़े। हे राजन्, यादव सेना के प्रसिद्ध सेनापति उनके सामने डटकर खड़े हो गए और अपनी प्रत्यंचाएँ टंकारने लगे; शत्रुओं ने यदुवंशियों पर बाणों की ऐसी वर्षा की जैसे बादल पर्वत पर जल बरसाते हैं।

रुक्मिणी ने अपने स्वामी की सेना को बाणों की उस वर्षा में ढँका हुआ देखा और भय से विह्वल आँखों से लजाते हुए उनके मुख की ओर देखा। प्रभु ने ठहाका लगाकर उन्हें आश्चस्त किया।

प्रहस्य भगवानाह मा स्म भैरमलोचने ।

विनङ्क्ष्यत्यधुनैवैतत् तावकैः शात्रवं बलम् ॥ ५ ॥

prahasya bhagavān āha mā sma bhair vāma-locane vinaṅkṣyaty adhunaivaitat tāvakaiḥ śātravaṁ balam

अर्थ: हँसकर भगवान ने कहा: हे सुन्दर नेत्रों वाली, डरो मत। शत्रु की यह सेना अभी इसी क्षण तुम्हारी ही सेना के हाथों नष्ट हो जाएगी। (स्कन्ध 10, अध्याय 54, श्लोक 5)



कृष्ण हँसकर रुक्मिणी का भय दूर करते हैं और यादव सेनापति पीछा करते राजाओं के सामने डट जाते हैं; जरासन्ध की सेनाएँ टूटकर रणभूमि से हट जाती हैं।

शत्रुओं का यह पराक्रम सहन न कर गद, संकर्षण और अन्य यदुवीर अपने नाराच बाणों से शत्रु-सेना के घोड़ों, हाथियों और रथों पर टूट पड़े। कुण्डल, मुकुट और पगड़ियों से सजे सिर, शस्त्र थामे हुए हाथ, और योद्धाओं और वाहनों के अंग करोड़ों की संख्या में धरती पर गिरे। वृष्णियों द्वारा इस प्रकार अपनी सेनाओं को छिन्न-भिन्न देख जरासन्ध आदि राजा पीठ दिखाकर रणभूमि से हट गए।

जरासन्ध शिशुपाल को सान्त्वना देते हैं

शिशुपाल ऐसे खड़ा था मानो उसकी विवाहिता पत्नी ही छीन ली गई हो; उसका मुख मुरझा गया था और मन का उत्साह टूट चुका था। जरासन्ध और अन्य राजाओं ने उसके पास आकर कहा, “हे पुरुषसिंह, यह दीनता त्याग दो। देहधारियों में सुख और दुःख कभी स्थायी नहीं रहते। जैसे काठ की पुतली बाज़ीगर की इच्छा से नाचती है, वैसे ही यह जीव ईश्वर के अधीन होकर चेष्टा करता है और सुख-दुःख भोगता है।”

जरासन्ध ने कहा कि वह सत्रह बार तेईस अक्षौहिणी सेना लेकर कृष्ण से लड़ा और सत्रह बार हारा; केवल एक बार जीता। फिर भी वह न हार पर शोक करता है न जीत पर हर्षित, क्योंकि वह जानता है कि यह संसार काल और दैव के वश में घूमता है। “इस बार भी हम सेनापतियों के भी सेनापति, थोड़ी-सी सेना के साथ कृष्ण द्वारा रक्षित यदुवंशियों से हार गए। अभी काल उनके अनुकूल है; जब वह हमारे अनुकूल होगा, हम विजयी होंगे।” ऐसे समझाए जाने पर शिशुपाल बचे हुए अनुयायियों सहित अपनी राजधानी लौट गया, और शेष राजा भी अपने-अपने नगरों को चले गए।



जरासन्ध उदास शिशुपाल को समझाते हैं: देहधारी जीव दैव की इच्छा से कठपुतली की तरह नाचता है, और जय-पराजय काल के फेर से आती-जाती हैं।

रुक्मी की प्रतिज्ञा और उसकी चुनौती

किन्तु महाबली रुक्मी, जो कृष्ण से द्वेष रखता था और यह सह नहीं पा रहा था कि उसकी बहन राक्षस-विधि से ले जाई गई, एक अक्षौहिणी सेना लेकर उनके पीछे लगा रहा। क्रोध से जलते हुए उसने सब राजाओं के सामने प्रतिज्ञा की थी, “युद्ध में कृष्ण को मारे बिना और रुक्मिणी को वापस लाए बिना मैं कुण्डिनपुर में प्रवेश नहीं करूँगा।” उसने सारथी को आज्ञा दी कि जहाँ भी कृष्ण हो, रथ वहीं ले चले, और डींग मारी कि उसके बाण बहन को बलपूर्वक ले जाने वाले उस दुष्ट ग्वाले का घमण्ड उतार देंगे।

सर्वशक्तिमान प्रभु की महिमा से अनजान वह बड़बोला अकेले रथ पर आकर चिल्लाया, “ठहर! ठहर!” उसने कृष्ण पर तीन बाण चलाए और कहा, “क्षण-भर रुक, यदुकुल के कलंक! जैसे कौआ यज्ञ की हवि चुरा ले जाता है, वैसे मेरी बहन को चुराकर तू कहाँ जाएगा? छल से लड़ने वाले, मेरे बाणों से धूल चाटने से पहले मेरी बहन को छोड़ दे।”

मुस्कराते हुए श्रीकृष्ण ने उसका धनुष तोड़ दिया और रुक्मी को छह बाणों से, उसके चार घोड़ों को आठ से, सारथी को दो से और ध्वज को तीन से बेध दिया। रुक्मी ने दूसरा धनुष उठाकर प्रभु पर पाँच बाण चलाए; अविनाशी प्रभु ने वह धनुष तोड़ा, फिर अगला, और रुक्मी ने जो भी शस्त्र उठाया — परिघ, शूल, पट्टिश, खड्ग और ढाल, शक्ति और तोमर — सबको काट डाला। अन्त में रुक्मी हाथ में तलवार लिए रथ से कूदा और कृष्ण को मारने के लिए ऐसे झपटा जैसे पतंगा अग्नि पर गिरता है। प्रभु ने अपने बाणों से उस तलवार और ढाल के भी टुकड़े कर दिए और उसका वध करने के लिए अपनी तीखी तलवार उठा ली।

रुक्मिणी अपने भाई के लिए प्रार्थना करती हैं

अपने स्वामी को भाई के प्राण लेने को उद्यत देख भय से व्याकुल साध्वी रुक्मिणी पति के चरणों में गिरकर करुण स्वर में प्रार्थना करने लगीं।

योगेश्वराप्रमेयात्मन् देवदेव जगत्पते ।

हन्तुं नार्हसि कल्याण भ्रातरं मे महाभुज ॥ ३३ ॥

yogeshvarāprameyātman deva-deva jagat-pate hantum nārhasi kalyāṇa bhrātaram me mahā-bhuja

अर्थ: हे योगेश्वर, हे अप्रमेय स्वरूप वाले, हे देवों के देव, हे जगत के स्वामी, हे कल्याणमय महाबाहु! आपको मेरे भाई का वध नहीं करना चाहिए।
(स्कन्ध 10, अध्याय 54, श्लोक 33)



काँपती हुई रुक्मिणी अपने प्रभु के चरण पकड़कर भाई को छोड़ देने की प्रार्थना करती हैं; दयालु कृष्ण प्रहार रोक लेते हैं।

उनके अंग भय से काँप रहे थे, शोक से कण्ठ रूँध गया था और घबराहट में उनका स्वर्ण-हार खिसक गया था। ऐसी रुक्मिणी द्वारा चरण पकड़े जाने पर दयालु प्रभु रुक गए। फिर भी दुष्ट दण्ड से नहीं बचा: कृष्ण ने रुक्मी को उसी के दुपट्टे से बाँध दिया और तलवार की धार से उसकी मूँछ और केशों का कुछ भाग मूँडकर उसे कुरूप कर दिया। इसी बीच चुने हुए यदुवीरों ने रुक्मी की सेना को ऐसे रौंद डाला जैसे हाथी कमल-वन को कुचल देते हैं।

बलराम का उपदेश

यदुवीर जब कृष्ण के पास पहुँचे तो उन्होंने रुक्मी को उस अपमानजनक दशा में, लज्जा से अधमरा पाया। उसे बाँधा देखकर सर्वशक्तिमान संकर्षण का हृदय दया से भर गया; उन्होंने उसे मुक्त किया और कृष्ण से कहा, “कृष्ण! तुमने हमारे कुल के लिए निन्दनीय अधर्म किया है। किसी सम्बन्धी की मूँछ और केश काटकर उसे कुरूप कर देना उसके वध के बराबर है।”



बलराम लज्जित रुक्मी को मुक्त करते हैं और सिखाते हैं कि हमें सुख-दुःख देने वाला हमारे सिवा कोई नहीं, और मित्र-शत्रु का भेद माया द्वारा एक ही आत्मा पर खींचा गया है।

फिर वे कोमल स्वर में रुक्मिणी की ओर मुड़े।

मैवास्मान् साध्व्यसूयेथा भ्रातुर्वैरूप्यचिन्तया ।

सुखदुःखदो न चान्योऽस्ति यतः स्वकृतभुक् पुमान् ॥ ३८ ॥

maivāsmān sādhyv asūyethā bhrātur vairūpya-cintayā sukha-duḥkha-do na cānyo 'sti yataḥ sva-kṛta-bhuk pumān

अर्थ: हे साध्वी, अपने भाई की कुरूपता का विचार करके हमसे रोष मत करना। सुख-दुःख देने वाला और कोई नहीं है, क्योंकि मनुष्य अपने ही कर्मों का फल भोगता है। (स्कन्ध 10, अध्याय 54, श्लोक 38)

बलराम ने आगे कहा कि सम्बन्धी वध-योग्य अपराध करने पर भी सम्बन्धी के हाथों वध का पात्र नहीं होता; उसे छोड़ देना चाहिए, क्योंकि जो अपने ही दोष से मरा हुआ है उसे फिर क्यों मारा जाए? क्षत्रियों के लिए ब्रह्मा ने जो धर्म बनाया है वह ऐसा कठोर है कि उसमें भाई भाई का वध कर सकता है। धन के मद में अन्धे लोग ही राज्य, भूमि, धन, स्त्री या मान के लिए अपने सम्बन्धियों का अपमान करते हैं। और उन्होंने रुक्मिणी से कहा कि यह भेद-दृष्टि ही है जिससे अज्ञानियों की तरह मनुष्य विरोधियों का अहित और हितैषियों का हित चाहता है।

आत्ममोहो नृणामेव कल्पते देवमायया ।

सुहृद् दुर्हृददासीन इति देहात्ममानिनाम् ॥ ४३ ॥

ātma-moho nṛṇām eva kalpate deva-māyayā suhṛd durhṛd udāsīna iti dehātma-māninām

अर्थ: जो देह को ही आत्मा मानते हैं, उनके मन में भगवान की माया से यह आत्म-मोह उत्पन्न होता है कि यह मित्र है, यह शत्रु है और यह उदासीन है। (स्कन्ध 10, अध्याय 54, श्लोक 43)

उन्होंने कहा कि एक ही परम आत्मा समस्त देहधारियों में विराजमान है, किन्तु मूढ़ उसे अनेक देखते हैं, जैसे एक ही सूर्य अनेक पात्रों में अनेक दिखता है या एक ही आकाश घड़ों से घिरकर बँटा हुआ प्रतीत होता है। पंचभूतों, इन्द्रियों और उनके विषयों से बना यह शरीर आदि और अन्त वाला है; अज्ञान से आत्मा पर आरोपित होकर यही जीव को जन्म-मरण के चक्र में घुमाता है, यद्यपि आत्मा का किसी से संयोग-वियोग नहीं, जैसे सूर्य का नेत्र और रूप से नहीं। जन्म आदि विकार केवल शरीर के हैं, आत्मा के नहीं, जैसे घटना-बढ़ना चन्द्रमा की कलाओं का है, चन्द्रमा का नहीं; और शरीर की मृत्यु आत्मा पर वैसे ही आरोपित होती है जैसे अमावस्या को चन्द्रमा का लोप कहा जाता है। जैसे स्वप्न देखने वाला असत् को ही अनुभव करता है, वैसे ही अज्ञानी जीव संसार में भटकता है। “इसलिए,” उन्होंने कहा, “हे शुचिस्मिते, आत्मा को सुखाने और मोहित करने वाले इस अज्ञानजनित शोक को तत्त्वज्ञान से दूर करके स्वस्थ हो जाओ।”

भगवान बलराम से सान्त्वना पाकर कृशांगी वधू ने अपना विषाद त्याग दिया और विवेक से मन को स्थिर कर लिया।

रुक्मी भोजकट बसाता है

रुक्मी केवल प्राण बचाकर निकला था। उसकी सेना और यश नष्ट हो चुके थे, आशाएँ टूट गई थीं, और अपनी कुरूपता उसे कचोटती रहती थी। कृष्ण को मारे बिना और बहन को लौटाए बिना कुण्डिनपुर में प्रवेश न करने की अपनी प्रतिज्ञा से बँधा वह भोजकट नामक एक विशाल नगर बसाकर वहीं क्रोध में जलता हुआ रहने लगा।

द्वारका में विवाह

इस प्रकार शत्रु राजाओं को हराकर प्रभु भीष्मक-पुत्री रुक्मिणी को द्वारका ले आए और, हे कुरुश्रेष्ठ, विधिपूर्वक उनसे विवाह किया। उस नगरी के घर-घर में, जहाँ के लोग कृष्ण को ही अपना एकमात्र प्रिय मानते थे, उत्सव मनाया गया। चमकते मणियों के कुण्डल पहने, आनन्द से भरे स्त्री-पुरुष सुन्दर विवाह-वेश में सजे वर-वधू के लिए उपहार लेकर आए।



द्वारका ध्वजाओं, रत्नजड़ित तोरणों, दीपों और हर द्वार पर मंगल-सामग्री से सज जाती है, और नगरवासी वर-वधू के लिए उपहार लाते हैं।

वृष्णियों की वह नगरी इन्द्र के सम्मान में उठाई गई ध्वजाओं, मालाओं, वस्त्र-वितानों और रत्नजड़ित तोरणों से, हर द्वार पर रखी मंगल-सामग्री और जल-भरे कलशों से, जलते अगुरु की धूप और दीपों की पंक्तियों से सज गई। उसकी सड़कें आमन्त्रित राजाओं के हाथियों के मद से भीगी थीं और द्वारों पर केले और सुपारी के ऊँचे वृक्ष खड़े थे। कुरु, सृजय, कैकेय, विदर्भ, यदु और कुन्ति एक-दूसरे से मिलकर आनन्दित हुए, और एकत्र राजकुमार-राजकुमारियाँ चारों ओर गाई जाती रुक्मिणी-हरण की कथा सुनकर विस्मित रह गए।

द्वारकायामभूद् राजन् महामोदः पुरौकसाम् ।

रुक्मिण्या रमयोपेतं दृष्ट्वा कृष्णं श्रियः पतिम् ॥ ६० ॥

dvārakāyām abhūd rājan mahā-modaḥ puraukasām rukmiṇyā ramayopetaṁ dṛṣṭvā kṛṣṇaṁ śriyaḥ patim

अर्थ: हे राजन्, श्री के स्वामी श्रीकृष्ण को साक्षात् लक्ष्मीस्वरूपा रुक्मिणी से युक्त देखकर द्वारकावासियों को महान आनन्द हुआ। (स्कन्ध 10, अध्याय 54, श्लोक 60)

इस अध्याय की प्रमुख शिक्षाएँ

1. प्रभु की हँसी में भय घुल जाता है। जब रुक्मिणी बाणों की वर्षा देखकर भय से ऊपर देखती हैं, तब कृष्ण हँसकर श्लोक 5 में वचन देते हैं कि शत्रु अभी नष्ट हो जाएगा। उनके रथ पर चढ़ी आत्मा को कोई शत्रु-शक्ति स्थायी रूप से डरा नहीं सकती।
2. सुख-दुःख दैव से आते हैं। जरासन्ध का कठपुतली का उदाहरण, यद्यपि प्रभु के शत्रु के मुख से निकला है, सत्य है: देहधारी जीव उच्चतर नियन्त्रण के अधीन सुख-दुःख भोगता है, और समभाव ही विवेक है।
3. प्रभु भक्त की प्रार्थना पर झुक जाते हैं। तलवार उठाए कृष्ण को श्लोक 33 में रुक्मिणी की काँपती प्रार्थना के सिवा कुछ नहीं रोकता; जो उनके चरण पकड़ लेता है, उस पर कृपा अपराधी के दोष से भारी पड़ती है।
4. हर कोई अपने कर्म का फल भोगता है; सम्बन्धी का वध सम्बन्धी न करे। श्लोक 38 में बलराम रुक्मी की लज्जा का भार उसके अपने आचरण पर रखते हैं, और सम्बन्धी को मारने के बजाय छोड़ देने का नियम बताते हैं।
5. मित्र, शत्रु और उदासीन — ये माया के ठप्पे हैं। अध्याय का हृदय श्लोक 43 का बलराम का उपदेश है: एक ही आत्मा हर देह में वैसे चमकती है जैसे एक सूर्य अनेक पात्रों में, और शोक तभी उपजता है जब अज्ञान देह को आत्मा मान बैठता है।

अध्याय का गहनतम बिन्दु यह है कि प्रभु ने यह सारी परीक्षा अपनी वधू की शिक्षा के लिए रची। कृष्ण ने तलवार इसलिए उठाई कि शत्रु के प्रति भी रुक्मिणी की करुणा प्रकट हो, और बलराम को इसलिए बोलने दिया कि वे, और हर श्रोता, यह जान लें कि हमें सुख-दुःख देने वाला हमारे सिवा कोई नहीं, और नातेदारी तथा शत्रुता दोनों एक ही आत्मा के पहने हुए वेश हैं। जब अन्तिम श्लोक रुक्मिणी को साक्षात् रमा कहता है, तब पूरा अध्याय प्रभु और उनकी नित्य संगिनी के सनातन मिलन के रूप में खुल जाता है।

एक भाक्तेमय चिन्तन

मेरे मन में जो बात ठहर जाती है, वह दो शोकग्रस्त व्यक्तियों को दी गई दो प्रकार की सान्त्वनाओं का अन्तर है। जरासन्ध शिशुपाल को कठपुतली के दर्शन से समझाता है: भाग्य पलटता है, समय हमारा साथ देगा, अगली बार हम जीतेंगे। यह सांसारिक समझदारी है, किन्तु यह शिशुपाल को प्रतिशोध की आशा पालते हुए ही छोड़ देती है। बलराम रुक्मिणी को कुछ बिलकुल अलग देते हैं। वे बेहतर भाग्य का वचन नहीं देते; वे बताते हैं कि रुक्मिणी वास्तव में कौन हैं, और उनकी लज्जा उस देह की है जो कभी आत्मा थी ही नहीं। और जो प्रभु अपने विरुद्ध उठे हर शस्त्र को तोड़ देते हैं, वे एक सच्ची प्रार्थना से बँध जाते हैं — और बँधकर प्रसन्न होते हैं।

एक दैनिक भक्ति-अभ्यास

आज जब भी किसी के शब्द या व्यवहार आपको आहत करें, बलराम की यह शिक्षा याद कीजिए कि मित्र, शत्रु और उदासीन — ये माया द्वारा एक ही आत्मा पर खींचे गए भेद हैं। उस भेद से उत्तर देने के बजाय उस व्यक्ति को मौन रूप से प्रभु को सौंप दीजिए, जैसे रुक्मिणी ने अपने भाई को सौंपा, और उसके लिए क्षमा और आशीष माँगिए। फिर धीरे से जप कीजिए: ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

उपसंहार

दशम स्कन्ध का चौवनवाँ अध्याय रुक्मिणी-हरण को उसकी पूर्णता तक पहुँचाता है। पीछा करते राजा खदेड़ दिए जाते हैं, और कृष्ण को मारने की शपथ लेने वाला रुक्मी बँधा और मुँड़ा हुआ केवल इसलिए जीवित रहता है कि बहन ने उसके लिए प्रार्थना की। बलराम का एक आत्मा का उपदेश वधू के शोक को शान्ति में बदल देता है, और द्वारका अपना आनन्द उड़ेल देती है जब लक्ष्मीपति और स्वयं लक्ष्मी विवाह-सूत्र में बँधते हैं। हम रुक्मिणी से अपने विरोधियों के लिए भी दया माँगना सीखें, और बलराम से हर प्राणी में एक ही प्रभु को देखना।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति जगाए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

संदर्भ एवं आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी), दशम स्कन्ध (उत्तरार्ध), चतुःपञ्चाशत्तम अध्याय।
- शृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन एवं अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, श्रद्धापूर्ण पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी एवं लिप्यन्तरण सहित दिए गए हैं और उनके अर्थ सारांश रूप में प्रस्तुत हैं। यह किसी एक प्रकाशक के सतत अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी प्रकाशक के संबंध या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-10-chapter-54-the-marriage-of-krishna-and-rukmini-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

